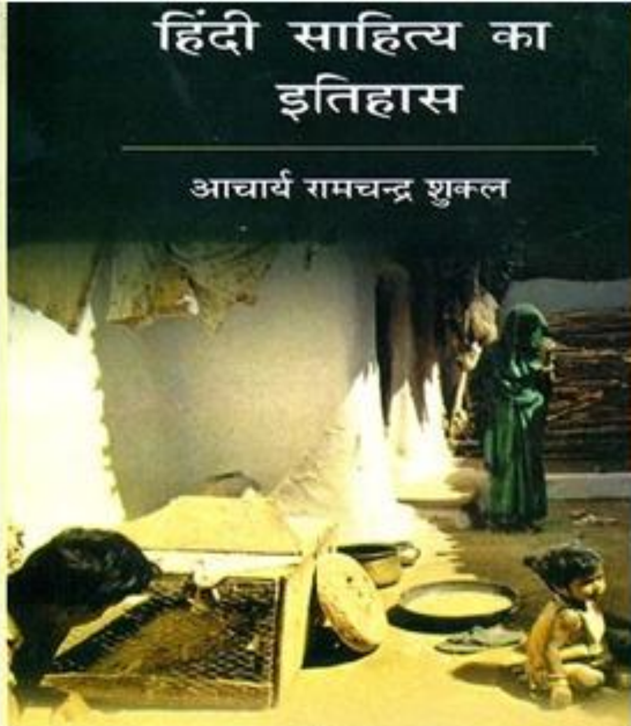
हिंदी साहित्य का
इतिहास
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

हिन्दी साहित्य
उद्भव और विकास
हजारीप्रसाद द्विवेदी

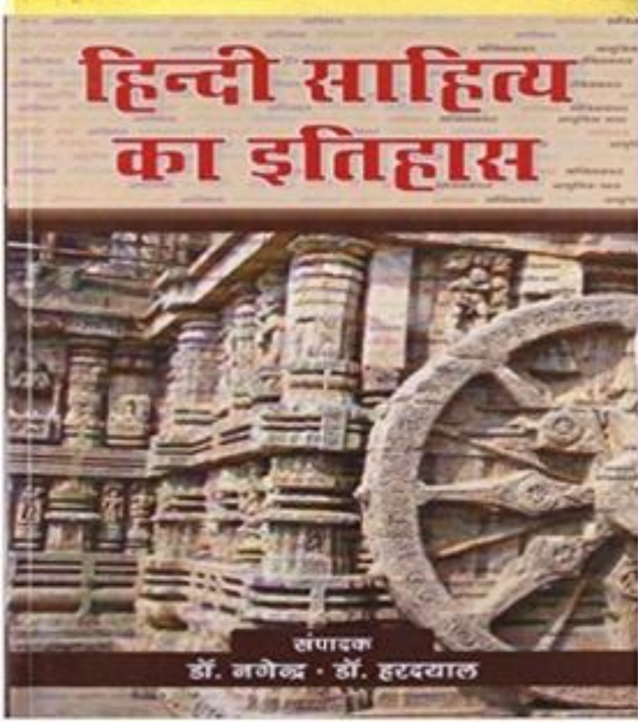
हिन्दी साहित्य
का इतिहास
संपादक
डॉ. नगेन्द्र · डॉ. हरदयाल

हिंदी साहित्य
और
संवेदना का विकास
रामस्वरूप चतुर्वेदी

रीतिकालः सामान्य परिचय

हिन्दी साहित्य के इतिहास में संवत् १७००-१९०० तक के साहित्य को उत्तर मधयकाल या रीतिकाल कहा गया है । लगभग दो सौ वर्षों का यह काल हिन्दी जगत के लिए आज भी बहुत महत्वपूर्ण हैं । हिन्दी साहित्य की अविरल धाारा सतत् प्रवहमान है।

हिंदी साहित्य का उत्तर मध्य काल

(1700-1900 वि.)

रीतिकाल का नामकरण

- अलंकृत काल
- शृंगार काल
- अलंकार काल
- कला काल

नामकरण

रीतिकाल के विभिन्न नाम विद्वानों द्वारा दिये गये हैं, जो इस प्रकार हैं–

- मिश्रबन्धु – अलंकृत काल
- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – रीति काल द्धउत्तर मधय कालऋ
- पं0 विष्ठवनाथ प्रसाद मिश्र – श्रृंगार काल
- रामचन्द्र शुक्ल ‘रसाल’ – कला काल

मिश्रबन्धाु–अलंकृत काल

- मिश्रबन्धाुओं का यह तर्क था कि इस युग में कविता को अलंकृत करने की परिपाटी अधिाक थी, किन्तु इस युग की कविता केवल अलंकृत हीं नहीं है, उसमें काव्य के सभी अंगों का निरूपण शास्त्रीय पद्धति पर हुआ है। इस काल के कवियों का धयान रस पर भी उतना ही रहा है जितना अलंकार पर। ‘अलंकृत’ शब्द इस युग की कविता का विष्ठोषण हो सकता है लक्षण ग्रन्थों का नहीं, जो कफी प्रचुर मात्र में इस काल में मिलते हैं, अतः यह नाम पूरी तरह सार्थक प्रतीत नहीं होता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल –रीति काल ;उत्तर मधय काल

- रीति काल नामकरण के पीछे रचना की पद्धति का आधाार ग्रहण किया गया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने प्रवृति के अनुसार इस काल को श्रृंगार काल कहे जाने में कोई आपत्ति प्रकट नहीं की है । इस काल में श्रृंगार के साथ साथ लक्षण–लक्ष्य ग्रंथों की परंपरा और नीति तथा वीरता की रचनाओं की प्रवृति भी मिलती है। हॉ यह सत्य है कि प्रमुखता यहॉ श्रृंगार की है।

पं0 विष्ठवनाथ प्रसाद मिश्र– श्रृंगार काल

- भारतीय काव्यष्ठास्त्र के क्षेत्र में रस को काव्य की आत्मा माना गया है। श्रृंगार को रसों का राजा कहा गया है । य श्रृंगार रीतिकाल में केवल रस नहीं है, बल्कि एक मानसिकता है। इस काल के साहित्य का पोषक सामंती वातावरण है, जिसकी अभिरूचि और जिज्ञासा के अनुसार काव्य रचनाओं का निर्माण हुआ है। श्रृंगार इस य्ग की प्रमुख प्रवृति है। यह इस य्ग की कविता का प्राण है। इसलिए पं0 विष्ठवनाथ प्रसाद मिश्र ने इसका नामकरण श्रृंगार काल किया है, लेकिन इससे इस काल की अन्य प्रवृतियां यथा नीति, वीरता, भक्ति, मनोरंजन आदि तिरोहित हो जाते हैं।

रामचन्द्र शुक्ल ‘रसाल’–   कला काल

- कला काल नामकरण भी पूरी तरह से सार्थक नहीं प्रतीत होता क्योंकि य केवल कविता के ष्ठिाल्प से संबंधिात है। कविता के विषय और जीवन से उसके अंतर्संबंधाों की स्पष्टता का पता इस नाम से नहीं चल सकता है, अत: यह नाम भी उपयुक्त नहीं है।

- इस काल के रीतिकाल कहने के पीछे प्रमुख तर्क यह है कि रीति निरूपण की प्रवृति इस काल के सभी कवियों में हैं। रीति का अर्थ है–पद्धति, नियम। यदि घनानंद ठाकुर, बोधाा, आलम जैसे उत्कृष्ट कवियों को ‘रीतिमुक्त’ नाम दे दिया जाय तो शेष कवियों के इस काल को रीति काल कहना अधिाक उपयुक्त है।

रीति काल की प्रवृतियाँ

- रीति काव्य में रसिकता और शास्त्रेयता का योग है। रसिकता का आधाार विवेच्य काल की जन रूचि है और शास्त्रेयता का आधाार कवियों के पांडित्य प्रदर्शन और विद्वताजन्य प्रदयर्शन की अभिरूचि है।
- रीतिकाल का कवि–कर्म बहुत ईमानदार है। कवि का वर्ण्य–विषय भले ही श्रृंगार हो, लेकिन कला और शिल्प के मामले में रीतिकालीन कवि कोई प्रतिद्वंदिता नहीं जानता है।

रीति काल की प्रवृतियाँ इस प्रकार है–

- रीति निरूपण
- श्रृंगारिकता
- वीर काव्य
- भक्ति
- नीति
- अलंकार प्रियता
- भाषा
- कला की प्रधाानता
- चमत्कार–प्रदर्षान
- कवित्त, सवैया तथा सतसई शैली का प्रयोग

रीति निरूपण

रीति निरूपण में कई अन्तः प्रवृतियाँ भी सम्मिलित हैं–

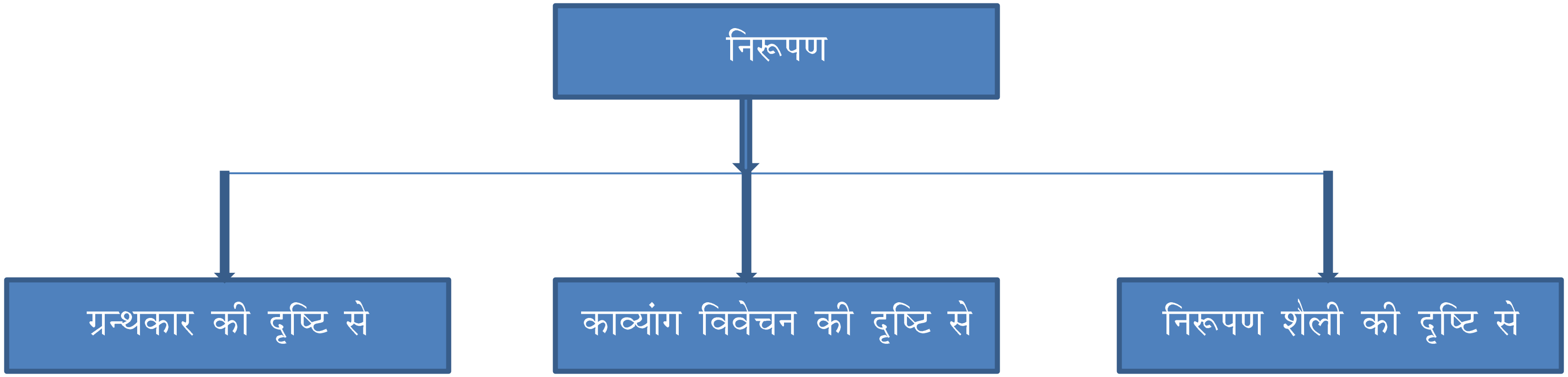

निरूपण के अन्तर्गत तीन प्रकार की अन्तः प्रवृतियाँ सम्मिलित हैं –

- **ग्रन्थकार की दृष्टि** से – इनमें प्रथम दृष्टि रीति–कर्म है। इसके अन्तर्गत वे ग्रन्थ आते हैं, जिनमें काव्य के अंगों का सामान्य परिचय देना हीं रचनाकारों का उद्देश्य है। एसे ग्रन्थों में काव्य लक्षण के साथ उदाहरण अन्य लोगों के काव्य से दिया गया है। इनका उद्देश्य कवित्व प्रदर्शन नहीं था। जसवन्त सिंह का 'भाषाभूषण', याकूब खाँ का 'रसभूषण', रसिक सुमति का 'अलंकार चन्द्रोदय', दलपतिराय वंशीधार का 'अलंकार रत्नाकर', गोविन्द का 'कर्णाभरण', दूलह का 'कविकुलकण्ठाभरण', रसरूप का 'तुलसीभूषण' आदि एसे हीं ग्रन्थ हैं।
- **द्वितीय दृष्टि** में रीतिकर्म एवं कविकर्म का समान महत्व रहा है। इसके अन्तर्गत वे ग्रन्थ आते हैं जिनमें काव्यांगो के लक्षण और उदाहरण दोनों की रचना रचनाकारों द्वारा की गयो है। उदाहरणों में रचनाकारों की कवित्व प्रतिभा और रस–निष्पत्ति प्रमुख है। चिन्तामणि, मतिराम, भूषण, देव, दास, कुलपति, श्रीपति, पदमाकर, ग्वाल आदि के ग्रन्थ इसी कोटि में आते हैं।
- **तृतीय दृष्टि** में रचनाकारों ने किसी लक्षण के फेर में न पड़कर स्वतन्त्र रूप से रचनाएँ की हैं। उन्होनें छन्दों की रचना काव्यशास्त्र के नियमों के अनुसार ही की है, किन्तु पूर्व की परिपाटी से अलग हटकर। उन्होंने न तो संस्कृत के किसी ग्रन्थ का आधार लिया है और न ही आचार्य बनने की होड में अपने आप को शामिल किया है। बिहारी, मतिराम, भूपति, चन्दन आदि एसे हीं रचनाकार हैं।

काव्यांग विवेचन की दृष्टि

- **प्रथम प्रवृति है** – सर्वांग विवेचन की। इस प्रकार के ग्रन्थों में सामान्य रूप से काव्य के सभी अंगों–काव्य लक्षण, काव्य हेतु, काव्य प्रयोजन, काव्य भेद, शब्द शक्ति, काव्य की आत्मा, काव्य गुण, काव्य दोष, काव्य रीति, अलंकार तथा छन्द का निरूपण किया गया है। देव का 'ष्ठाब्द रसायन', चिन्तामणि का 'कविवुलकल्पतरू', कुलपति का 'रस रहस्य', दास का काव्य–निर्णय, सोमनाथ का रसपीयुष निधिा, जनराज का 'कविता–रस विनोद' आदि इस प्रकार के ग्रन्थ हैं ।
- **दूसरी प्रवृति है** – विष्ठिाष्टांग विवेचन की–इसके अन्तर्गत रचनाकारों ने काव्य के किसी एक विष्ठिाष्ट अंग का विवेचन किया है। य विष्ठिाष्ट विषय हैं–रस, अलंकार और छन्द। इन ग्रन्थों में निम्न विषयों का अलग अलग विवेचन किया गया है, साथ हीं मिला जुला कर भी विवेचन किया गया है।

रस निरूपण की कोटि के ग्रन्थ

रचना	रचनाकार
रसविलास	चिन्तामणि
सुधाानिधिा	तोष
रस रत्नाकर	सुखदेव मिश्र
रसार्णव	सुखदेव मिश्र
रसप्रबोधा	रसलीन
रसिक विलास	समनेस
रसचन्द्रिका	उजियारे
नवरसतरंग	बेनी प्रवीन
जगद्विनोद	पद्‌माकर
रंगतरंग	नवीन
रसरंग	ग्वाल
रसिक विनोद	चन्द्रष्ठोखर वाजपेयी
रसराज	मतिराम
रसविलास	देव
भवानी विलास	देव
कुष्ठाल विलास	देव
श्रृंगाररसमाधुरी	कृष्णभऋदेव ;षि
रसदृष्टि	शिवनाथ
श्रृंगार निर्णय	दास

अलंकार निरूपण कोटि के ग्रन्थ

रचना	रचनाकार
ललितललाम	मतिराम
अलंकारपंचाशिका	मतिराम
शिवराज भूषण	भूषण
रामालंकार	गोप
रामचन्द्रभूषण	गोप
रामचन्द्राभरण	गोप
अलंकारचन्द्रोदय	रसिक सुमति
अलंकाररत्नाकार	दलपतिराय
रसिकमोहन	रघुनाथ
कर्णाभरण	गोविन्द
कविकुलकण्ठाभरण	दूलह
रघुनाथ अलंकार	सेवादास
तुलसीभूषण	रसरूप
पद्माभरण	पद्माकर
अलंकारभ्रमभ्रंजन	ग्वाल

छन्द निरूपण कोटि के ग्रन्थ

वृत्तकौमुदी	मतिराम
छन्दोहृदयप्रकाष्ठा	भूषण
वृत्तविचार	सुखदेव मिश्रा
श्रीनाथपिंगल छन्दविलास	माखन
छन्दोर्णवपिंगल	दास
वृत्तविचार	दष्ठारथ
पिंगलप्रकाष्ठा	नन्दकिशोर

रीति निरूपण की सभी प्रवृत्तियों पर दृष्टि डालने के बाद तीन बातें स्पष्ट होती है।

- इस युग के सभी रचनाकारों ने अपनी रचनाओं का निर्माण सामान्य पाठकों को भारतीय काव्यष्ठाास्त्र का ज्ञान प्राप्त कराने के लिए किया है।
- इस युग के अधिाकांष्ठा रचनाकार आचार्य और कवि ष्ठिाक्षक हैं। संस्कृत के उदाहरणों का ब्रजभाषा में अनुवाद हुआ है। इस क्रम में उनका धयान कवि- कर्म पर अधिाक रहा है।
- इस युग के रीति ग्रन्थकारों में मूल रूप से रस को काव्य की आत्मा' मानने की प्रवृति पर जोर है। सभी काव्यांगो का निरूपण करते हुए भी वे लोग मूलतरू रसवादी थे ।

श्रृंगारिकता

- श्रृंगार रीति काल की कविता का प्राण है। श्रृंगार के दो पक्ष होते हैं–संयोग और वियोग। इस काल का श्रृंगार वर्णन नायक नायिका के प्रेम और आत्मा तक नहीं पहुॅंच सका है। श्रृंगार के आलंबन हैं–नायक नायिका। युग की मनोवृत्ति के अनुकूल श्रृंगार और प्रेम का बाहरी रूप ही इस युग में स्वर पा सका। आन्तरिक रूप की ओर किसी की दृष्टि नहीं जा सकी। इस युग में श्रृंगार वर्णन में रचनाकार इतने निमग्न थे कि उन्होंने किसी प्रकार का संकोच नहीं किया है। रीतिकालीन जीवन का नायक निर्दव्न्द होकर भोग करने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझता है। नारी के प्रति इस युग में सामन्तीय दृष्टि रही है। वह केवल भोग्या और विलासिता का साधान है। आश्रयदाताओं की विलासिता, कामुकता एवं वासनाजन्य भावों की तृप्ति हेतु घोर श्रृंगारिक कविता की रचना रीति काल में हुई है। इस युग की सौन्दय–भावना नारी के बाहरी रूप से नहीं हट सकी, एसे में वो उसके आत्मिक गुणों तक कैसे पहुॅंचती?
- इस काल के कवियों में श्रृंगार के साथ ग्राहस्थिक प्रेम की व्यापक स्वीकृति देखने को मिलती है। निम्न उदाहरण से यह बात स्पष्ट है–

  ''छोडि आपनो मौन तुम, मौन कौन के जातज़

  ''ते धानि जे ब्रजराज लखें गृहकाज करें अरू लाज संभारेज़ द्धमतिरामक्ष्
- रीतिकाल के श्रृंगार के विषय में डॉ0 भागीरथ मिश्र का दृष्टिकोण इस प्रकार है– ''उनका दष्टिकोण मुख्यतः ाोगपरक था, इसलिए प्रेम के उच्चतर सोपानों की ओर वे नहीं जा सके।ज़

वीर काव्य

- इस काल में भूषण नामक कवि थे, जिन्होंने वीररस प्रधाान काव्यों की रचना की थी। उनकी तीन रचनाएँ हैं– जो इस श्रेणी की श्रेष्ठ रचनाएँ हैं–शिवराज भूषण’, शिवाबावनी’, छत्रसालदशक’।

  ‘‘भूषण भनत तेरी हिम्मत कहाँ लौं कहौं

  किस्मत यहाँ लगि है जाकी भट जोट में।ज़

भक्ति

- रीति काल में भक्ति की प्रवृति का प्रणयन मंगलाचरण, समाप्ति के समय आर्ष्ठीवचन, अलंकारों के उदाहरण देने में मिलता है। सामान्य रूप से इस युग के रचनाकार गणेष्ठा, शिव, शक्ति, राम तथा कृष्ण–राधाा आदि के प्रति अपनी श्र)ा निवेदित करते हुए दिखई पड़ते हैं। भक्ति इन कवियों के लिए एक ष्ठारण भूमि की तरह थी, जहाँ आकर वे अपने आकुल मन को विश्राम देते थे। बिहारीलाल का एक दोहा उदाहरणीय है–

  ‘‘मेरी भव बाधाा हरो, राधाा नागरि सोय

  जा तन की झांई परै, स्याम हरित दुति होय।ज़

नीति

- बिहारी, घाघ, बैताल, वृंद एवं गिरधारदास के नीति संबंधाी दोहे इस काल में महत्वपूर्ण हैं। परंपरागत यह प्रवृति संस्कृत से होती हुई हिन्दी की रीतिकालीन काव्य–धाारा में जीवंत रूप से विद्यमान है। वृन्द का एक उदाहरण महत्वपूर्ण है–

  ‘‘ाीकी पै नीके लगै, कहिए समय बिचारि।

  सबकौ मन हरषित करै, ज्यौं विवाह में गारि।।

  भले बुरे सब एक सम , जो लौं बोलत नाहिं ।

  जान परत हैं काग पिक, ;तु वसन्त के माहिं।। ज्ञ

अलंकार

- रीतिकालीन कवि अलंकार दीवा थे। अलंकार का अर्थ है– आभूषण। जिस प्रकार स्त्री बिना आभूषणों के ष्ठोभायमान नहीं हो सकती उसी प्रकार कविता रूपी स्त्री को भी बिना अलंकारों के नहीं सजाया जा सकता । इसलिए इस काल के कवियों ने घोषणा की थी–

  ‘‘जदपि सुजाति सुलच्छनी सुवरन सरस सुवृत्त ।

  ्षण बिनु न बिराजई कविता बनिता मित्त ।।ज़

- पांडित्य प्रदर्ष्ठन तथा चमत्कार प्रदर्ष्ठन के लिए अलंकारों का सुन्दर प्रयोग हुआ है। इस दृष्टि से बिहारी इस काल के श्रेष्ठतम कवियों में से एक हैं–

  ‘‘सोहत ओढ़ैं पीत पट स्याम सलोने गात।

  मनो नीलमणि सैल पर आतप पर्‍यो प्रभात।।ज़

कला एवं चमत्कार-प्रदर्शन

- रीति-काल का साहित्य दरबारों के आश्रय में ?लने-?ूलने वाला साहित्य है । राजा, सामन्त तथा बड़े पदों पर आसीन व्यक्तियों का मनोरंजन करना रचनाकारों का उद्देष्ठय होता था। एक से बढ़ कर एक दोहो की रचना इस काल में संभव हुई। प्रतियोगिता के इस वातावरण में काव्य-कला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई थी। वास्तव में हिन्दी-साहित्य के इतिहास में सबसे पहले रीति काल के कवियों ने ही काव्य को ष्ठाु) कला के रूप में ग्रहण किया। इस प्रतियोगिता ने काव्य में चमत्कार पैदा किया। बिहारी के काव्य में रंगो का संयोजन, अलंकारों कि योजना अभूतपूर्व चमत्कार पैदा करने में समर्थ था। एक उदाहरण प्रस्तुत है-

दृग अरूझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति।
परति गॉठ दुरजन हिए, दई नई यह रीति।।

तंत्रेनाद कबित्त रस , सरस राग रति रंग।
अनबूड़े बूड़े, तिरे जे बूड़े सब अंग।।

भाषा एवं छन्द विधाान

- रीतिकाल में काव्य की भाषा ब्रजभाषा बनी रही। इस विषय में आचार्य शुक्ल का विचार है– भाषा जिस समय सैकड़ों कवियों द्वारा परिमार्जित होकर प्रौढ़ता को पहुँची उसी समय व्याकरण) उसकी व्यवस्था होनी चाहिए थी।ज़ तात्पर्य यह कि इस काल में ब्रजभाषा परिमार्जित और प्रौढ़ हो चुकी थी। वह कवियों की वष्ठावर्तिनी थी।

  इस काल के कवियों के प्रिय छंद कवित्त और सवैया थे। दोहों में भी कविता रचना होती थी। बिहारीलाल अपने दोहों के लिए ही लोकप्रिय हैं। बिहारी के दोहों के लिए 'गागर में सागर' की उक्ति प्रसि) है।

अतः समग्र रूप से कहा जा सकता है कि आलोच्य युग में अभिव्यंजना–कला की दृष्टि से उत्कृष्ट प्रतिभा वाले कवि अधिाकाधिाक संख्या में उत्पन्न हुए। रीतिकाल में कविता का कलापक्ष सुन्दर और चमत्कारी बना, जिसने काव्य को सचमुच एक उत्कृष्ट कला की श्रेणी में लाकर खड़ा किया।

हिंदी साहित्य का इतिहास

रीतिकाल

रीतिबद्ध

रीतिसिद्ध

रीतिमुक्त

रीतिकाल का वर्गीकरण

- विद्वानों ने रीतिकाल को तीन भागों में विभाजित किया है जो इस प्रकार से है–

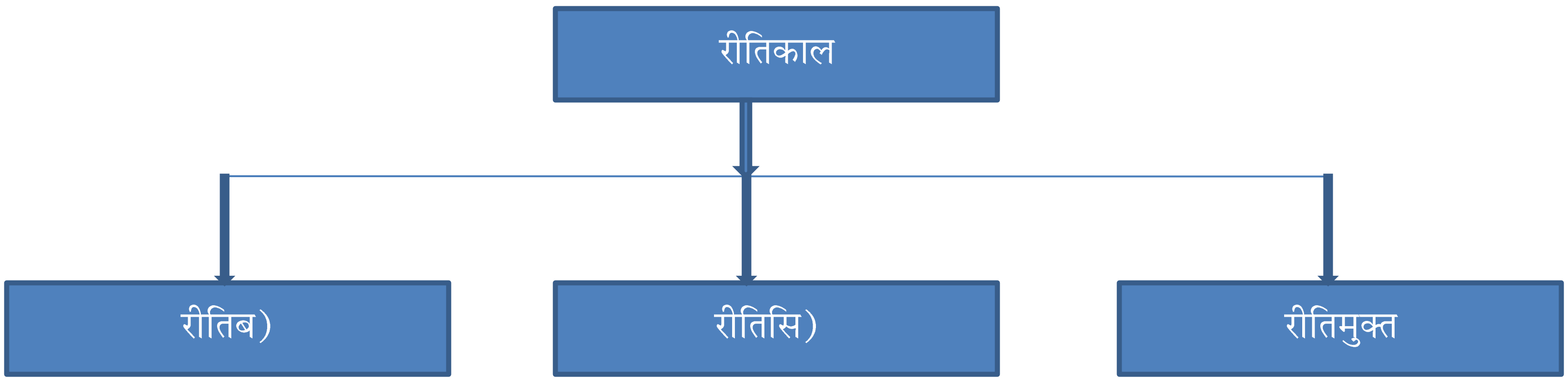

रीतिब)

- रीतिब) ष्ठाब्द के विषय में विद्वानों के बीच मतभेद हैं। आचाय विष्ठवनाथ प्रसाद मिश्र के अनुसार जो रचना लक्षणों और उदाहरणों से यक्त होती है उसे रीतिब) रचना कहेंगे। डॉ0 नगेन्द्र इस प्रकार की रचनाओं को रीतिब) कहने के पक्ष में नहीं हैं। उनके मत से वे कवि जो रीतिकार आचाय कवि हैं, जिन्होंने काव्यष्ठास्त्र की ष्ठिाक्षा देने के लिए रीति ग्रन्थों का निर्माण किया। उनके मत में रीतिब) कवि वे हैं जिन्होंने रीतिग्रन्थों की रचना न करके लक्षणों के अनुसार काव्य–रचना की है। काव्य के सभी अंग उनके धयान में रहे, परन्तु उनका प्रत्यक्ष निरूपण न करके केवल उत्कृष्ट काव्य रचना की है। इस स्थिति में वे मूलतः कवि हैं, आचाय नहीं। इसलिए एसे कवियों को रीतिब) मानना चाहिए। आचाय विष्ठवनाथ प्रसाद मिश्र एसे कवियों को 'रीतिसि) कवि' कहते हैं। डॉ0 नगेन्द्र के अनुसार जिन्हें रीतिब) कवि कहा गया है– उनमें बिहारी, बेनी, कृष्ण कवि, रसनिधिा, नृपष्ठाम्भु, नेवाज, हठी जी, रामसहायदास, पजनेस, द्विजदेव, सेनापति, वृन्द तथा विक्रम आदि रचनाकार आते हैं।

रीतिमुक्त काव्यधारा

- रीतिकाल में यह एक प्रमुख काव्यधारा रही है। रीति मुक्त का अर्थ है रीति–परम्परा से मुक्त। अर्थात विवेच्य काल के साहित्यिक बन्धानों और रूढ़ियों से मुक्त काव्य–धारा। इस धारा का नामकरण ‘रीतिमुक्त’ निर्विवाद रूप से सभी को स्वीकार है। इसे कुछ वि)ानों ने स्वच्छन्द काव्यधारा भी कहा है।
- स्वच्छन्द काव्यधारा में पष्ठिचमी साहित्य में एक बड़ी काव्य–धारा के लिए रूढ़ शब्द है। सर्वप्रथम यहाँ इस सन्दर्भ में आचाय रामचन्द्र शुक्ल का विचार प्रासंगिक है। उन्होंने आधाुनिक काल की एक अन्य काव्यधारा को भी ‘स्वच्छन्द काव्यधारा’ कहा है, जिसमें श्रीधार पाठक, माखनलाल चर्तुर्वेदी, सियारामष्ठारण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा ‘नवीन’, हरिवंष्ठा राय‘बच्चन’ आदि को गिनाया है। य सब अपने समय के तत्कालीन साहित्यिक परम्पराओं को त्यागकर भावना के मुक्त क्षेत्र में विचरण करने वाले कवि थे। स्पष्ट है कि हिन्दी काव्य में ‘स्वच्छन्दतावाद’ शब्द परम्पराओं और रूढ़ियों के त्याग के अर्थ में अधािक प्रयुक्त हुआ है पाष्ठचात्य साहित्य की काव्यधारा के प्रभाव के अर्थ में नहीं। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस सन्दर्भ में कल्पना और भावावेग पर बल देते हुए लिखा है– ‘ रोमांटिक साहित्य की उत्सभूमि वह मानसिक गठन है जिसमें कल्पना के अविरल प्रवाह और निविड आवेग– य दो निरन्तर घनीभूत मानसिक वृतियाँ ही इस व्यक्तित्वप्रधाान साहित्यिक रूप की प्रधाान जननी है।ज़
- स्वच्छन्द कवि की महत्ता इस बात में है कि वो काव्य–निर्माण में जादू जैसा भाव उत्पत्र करे। स्वच्छन्दतावाद का सम्बन्धा न तो काल से है और न देष्ठा से। किसी भी प्रकार की रूढ़ियों और नियमों से अलग हटकर कुछ रचनाकार क्रान्ति करते हैं तो एसे ही रचनाकारों की धारा का नाम स्वच्छन्दता वाद हो जाता है। साहित्य–जगत में यह सतत चलने वाली प्रक्रिया है।

स्वच्छन्दतावाद की कुछ विष्ोषताएँ इस प्रकार हं–

- यह आन्तरिक अनुभूतियों का काव्य है।
- यह व्यक्तिगत और आत्म प्रधाान होता है। इसमें कवि बाहय जगत से अधिाक अपने आप अर्थात 'स्व' को महत्व देता है।
- सभी प्रकार की रूढ़ियों से मुक्ति
- नवीन, अद्भुत सांकेतिक व्यंजना की बहुलता
- इसमें कल्पना और असाधाारण तत्वों का समावेष्ा अधिाक रहता है।
- इस तरह के काव्य में कवि का जोर हृदय और भावपक्ष पर अधिाक होता है। चमत्कार, उक्तिवैचित्र्य आदि पर धयान अपेक्षाकृत कम होता है।

रीतिकाल की रीतिमुक्त काव्य धाारा में घनानन्द, आलम, ठाकुर, बोधाा और द्विजदेव का योगदान मुख्य रूप से उल्लेखनीय है।

रीतिकाल के आगमन के कारण

- इसके पीछे संस्कृत में इसकी विष्ठाल परम्परा है।
- समकालीन रचना प्रक्रिया की निरंतरता एवं प्रेरणा
- भाषा कवियों को राज्याश्रय मिलना।

  सर्वप्रथम अकबर ने भाषा कवियों को अपने दरबार में आश्रय दिया। इससे पहले दरबार में संस्कृत का महत्व था। भाषा कवियों को प्रश्रय देने के बाद हिन्दी का महत्व बढने लगा। संस्कृत के कवियों के सामने भाषा कवियों को कोई सम्मान न था। यह एक बड़ा संघर्ष था जो निरन्तर जारी रहा तथा तत्पष्ठचात भारत की रियासतों– ओरछा, जयपुर, बूँदी, राजपूताना आदि दरबारों में भाषा कवियों को प्रतिष्ठा मिली और रीति साहित्य की रचना हुई।
- साहित्य में एक अलग मार्ग जो वीरता और भक्ति से अलग हो को खोजा जा रहा था । इस मार्ग को खोजने में संस्कृत साहित्य का पृष्ठाधाार कार्य कर रहा था। केष्ठावदास ने इस मार्ग को सभी कवियों के लिए खोल दिया।
- रीति काल का साहित्य दरबारों में पलने और फलने फूलने वाला साहित्य है। राजाओं की रूचि के अनुसार काव्य लिखना कवियों की मजबूरी थी। साथ ही पैसे भी अर्जन किये जा सकते थे और प्रतिभा का भी सम्मान होता था।
- लगभग दो से ढाई सौ वर्षो तक रीति काव्य का विष्ठोष आकर्षण बना रहा। न केवल राजदरबारों में वरन जन सामान्य के अन्तर्गत भी रीतिकाव्य ने सौन्दर्य चेतना अैर कलात्मक दृष्टिकोण का विकास करने में सहायता पहुँचायी।

धान्यवाद

डॉ० नेहा सिन्हा